व्याख्यान

बाल केन्द्रित शिक्षाः उद्‌भव और पतन

क्रिस्टोफर विंच

बाल केन्द्रित शिक्षा का विचार बच्चे में सीखने की स्वाभाविक क्षमता, अपने आसपास के वातावरण से सक्रिय रूप से जुड़े होने एवं सीखने की प्रक्रियाओं में बच्चे की महत्ता जैसी बुनियादी मान्यताओं पर आधारित है। शिक्षण में इसके निहितार्थ हैं कि बच्चों के अनुभवों एवं सक्रिय भागीदारी को प्राथमिकता देते हुए शिक्षण कार्य करवाया जाए। शिक्षक का दायित्व है कि वह बच्चे में उत्सुकता और जिज्ञासा जैसे भावों का पोषण करे जिससे कि उसमें स्वयं करके देखने और जांचने-परखने की सामर्थ्य का विकास हो सके। बाल केन्द्रित शिक्षा के विचार ने परंपरागत रूप से चले आ रहे शिक्षक केन्द्रित शिक्षा के विचार को उलट दिया।

इस व्याख्यान में क्रिस्टोफर विंच ने बाल केन्द्रित शिक्षा के विचार के उद्‌भव और पतन पर (यूरोप के संदर्भ में) प्रकाश डाला है। उनके अनुसार इस विचार का उद्‌भव रूसो की शिक्षाशास्त्रीय रचना 'एमिल' से होता है। रूसो के बाद में कई विचारकों ने इस विचार को जन शिक्षा में व्यवहार्य बनाने पर काम किया जिनमें पेस्तालॉजी प्रमुख हैं। भारत में बाल केन्द्रित शिक्षा का विचार विमर्श के केन्द्र में 90 के दशक में प्रभावी रूप से आया लेकिन व्यवहार में आज भी ज्यादातर स्कूलों में शिक्षक केन्द्रित व्यवस्था ही नजर आती है।

लेखक परिचय :

ब्रिटेन के समकालीन शिक्षा दार्शनिक, संप्रति किंग्स कॉलेज, लंदन में एज्युकेशन फिलॉसोफी एण्ड पॉलिसी के प्रोफेसर।

पुस्तकें : एज्युकेशन, ऑटोनॉमी एण्ड क्रिटिकल थिंकिंग, द फिलॉसोफी ऑफ ह्यूमन लर्निंग, एज्युकेशन, वर्क एण्ड सोशल केपीटल, क्वालिटी एण्ड एज्युकेशन, न्यू लेबर एण्ड फ्यूचर ऑफ ट्रेनिंग।

अनुवाद

अपर्णा

सबसे पहले आप सभी को मेरा अभिवादन। मेरे लिए यहां आना सम्मान की बात है और इस बात के लिए धन्यवाद देना चाहूंगा कि मुझे आप सब से बात करने का मौका मिला। रोहित ने मुझसे कहा था कि मैं यहां इंग्लैण्ड और यूरोप के कुछ हिस्सों में बाल केन्द्रित शिक्षा के उत्थान और पतन के बारे में बात करूं। मैं इस सत्र का आरम्भ यूरोप में बाल केन्द्रित शिक्षा की उत्पत्ति के बारे में कुछ बातों से करना चाहूंगा कि वहां इसका आरम्भ कैसे हुआ और कैसे इसका महत्त्व बढ़ा और अब क्यों इसका पतन हो रहा है। मैं यूरोप में हो रही कुछ अन्य गतिविधियों पर भी नजर डालूंगा।

मैं अपनी बात सन 1762 से शुरू करूंगा जब स्विस दार्शनिक ज्यां जॉक रूसो की शिक्षा पर पुस्तक *एमिल* प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक को आप यूरोप में प्रकाशित बाल केन्द्रित शिक्षा पर पहला पाठ (टेक्स्ट) कह सकते हैं। *एमिल* में रूसो लोकतांत्रिक समाज के नागरिक के लिए जरूरी शिक्षा के बारे में विस्तार से बताते हैं। इससे पहले मैं इसे उस संदर्भ से जोड़ना चाहूंगा जिसमें रूसो पले बढ़े। रूसो स्विस शहर जिनेवा के रहने वाले थे जो एक नगर राज्य था और जो अपना शासन स्वयं चलाता था और उसका हर नागरिक शासन में भागीदारी की योग्यता रखता था।

रूसो इस विचार से बहुत प्रभावित थे कि कोई नागरिक अपने समाज की राजनीति में सक्रिय भागीदारी निभाए। और आप कह सकते हैं कि शिक्षा को लेकर उनकी चिंता का उत्स यही है।

यह शिक्षा को लेकर उनकी चिंता का एक पहलू है। उनकी चिंता का दूसरा कारण असमानता के प्रति उनकी घृणा रहा है। *एमिल* के लिखने से सात वर्ष पूर्व 1755 में उन्होंने असमानता पर एक किताब लिखी जिसमें उन्होंने तर्क देकर बताया था कि मानव जाति का इतिहास, दरअसल काफी हद तक असमानता के विकास का इतिहास रहा है और इस किताब में उन्होंने मानव के मानस पर असमानता के कुप्रभाव के प्रति चिंता जताई है। ये दो चिंताएं एमिल में आकर जुड़ गई हैं। इसमें वे कहते हैं कि नागरिक तभी जिम्मेदार नागरिक कहे जा सकते हैं जब वे अपने सह-नागरिकों के साथ समानता बरतें। वे न तो अपने आप को किसी अन्य से बेहतर समझें और न ही किसी अन्य से कमतर। *एमिल* में इसी विचार को शैक्षिक परियोजना के रूप में पेश किया गया है जिससे ऐसे व्यक्ति का निर्माण हो सके जो अपने सह-नागरिकों के साथ स्वतंत्रता और समानता के साथ रह सके और अपने समाज के शासन में सक्रिय भागीदारी निभा सके।

अब मैं कुछ बातें रूसो की उन मनोवैज्ञानिक पूर्व धारणाओं बारे में करूंगा जो उन्होंने अपनी शिक्षा व्यवस्था की योजना बनाते समय निर्मित कीं। इनमें पहली बात जो मैं कहना चाहूंगा वह यह है कि मनुष्य इस प्रकृति का हिस्सा है, उससे अलग उसकी कोई पहचान नहीं है। इसलिए जो भी शिक्षा व्यवस्था हो, उसका प्रकृति से तादात्म्य होना चहिए, विरोध नहीं। अपनी इस बात को समझाने के लिए उसने कुछ अवधारणाएं गढ़ीं। इनमें पहली है *आम्योर दे सोइ* जिसका अंग्रेजी में अर्थ तो आत्म प्रेम है लेकिन रूसो ने इसे इस अर्थ में प्रयुक्त नहीं किया है बल्कि उनके अनुसार इसका अर्थ आंतरिक जीवन शक्ति है जो हमें बनाए रखती है और हमारे भले का कारण बनती है। दूसरा है *आम्योर प्रॉप्रे* जिसका अर्थ मैं समझता हूं कि आत्म-संरक्षण हो सकता है जो एक मानव समाज में स्थित होता है। इसलिए यह अन्य जीवों के आत्म-संरक्षण जैसा नहीं है बल्कि यह एक ऐसी आकांक्षा है जिसमें हम खुद को अन्य मानवों के साथ एक अच्छे संबंध में देखते हैं। इसलिए रूसो के लिए शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य एक स्वस्थ *आम्योर प्रॉप्रे* या आप कह सकते हैं आत्म मूल्य का भाव है।

इस विचार के आधार पर रूसो तर्क देते हैं कि सभी मनुष्य सीखने के लिए प्रेरित होते हैं। यह उनकी जीवन शक्ति का हिस्सा है और आप कह सकते हैं कि सीखने की हमारी आकांक्षा भी होती है और यह हमारे आत्म सम्मान की एक स्थिति भी है। उनका तर्क है कि बच्चे में सीखने की एक अंतर्भूत प्रेरणा होती है और शिक्षा जो कर सकती है वह यह कि वह प्रकृति के प्रतिकूल के बजाए प्रकृति के अनुकूल इस अंतर्भूत प्रेरणा को संचालित करे।

एक अन्य विचार, जो रूसो को देर से तो आया पर प्रभावी था। उन्होंने एक विचार विकसित किया कि मानव बच्चों का विकास स्तरवार होता है। पहले स्तर में वे केवल अपने बारे में चिंता करते हैं और फिर वे अन्य लोगों की चिंता करते हैं और अंततः वे दूसरों की भावनाओं के साथ संवेदनात्मक संबंध बनाते हैं। उनका यह सिद्धांत *एमिल* में ज्यादा स्पष्ट दिखाई नहीं देता, लेकिन बाद के मनोविज्ञानवादियों के लेखन में काफी प्रभावी हो गया। उदाहरण के लिए प्याजे, जिन्होंने बच्चों के स्तरवार विकास का व्यवस्थित और तथ्यों पर आधारित सिद्धान्त विकसित किया। रूसो के बारे में एक और बात मैं बताना चाहूंगा। रूसो यह मानते थे कि उनके शिक्षा संबंधी सिद्धान्त 12 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए उपयुक्त नहीं हैं। इसलिए वे मानते थे कि बच्चों को 12 वर्ष की उम्र से पहले लिखने और पढ़ने से परिचित नहीं करना चाहिए।

अब मैं रूसो के मनोवैज्ञानिक विचारों और नैतिक मनोविज्ञान, प्रेरणा एवं सीखने के बारे में उनके विचारों को एक साथ रखने की कोशिश करूंगा। रूसो की दृष्टि में किसी सफल शिक्षण के लिए जरूरी है कि पहले आत्मधारणा का विकास त्रुटिहीन तरीके से किया जाना चाहिए। इस प्रकार न तो बच्चे पर कोई दबाव हो और न ही बच्चा यह सोच पाए कि उसे किसी अन्य मनुष्य को नीचा दिखाना है। *एमिल* काफी साहित्यिक अंदाज से लिखी गई किताब है। इस किताब के एक बेहद ध्यान आकर्षित करने वाले अंश में इस बात को विस्तार दिया गया है। इसमें रूसो एक शिशु को नर्स के द्वारा चपत लगाने पर रोने का वर्णन करते हैं। यहां पर मैं बताना चाहूंगा कि यह किताब बच्चे के जन्म से 21 वर्ष की आयु तक के लिए शैक्षिक पुस्तिका के रूप में लिखी गई है। 21 वर्ष की आयु तक इसलिए कि इस आयु पर एमिल विवाह के लिए तैयार है। (एमिल इस किताब का केन्द्रीय पात्र है।) पुस्तक के शुरुआती अंश में रूसो एक बच्चे के बारे में बताते हैं जिसे एक संयमहीन नर्स थप्पड़ रसीद कर देती है। इस सजीव वर्णन में बच्चा पहले स्तब्ध रह जाता है, फिर धीरे-धीरे क्षोभ से नीला पड़ते हुए रो देता है। इस पर रूसो कहते हैं कि पहले जब वह चुप है तो मुझे लगा कि वह गुलाम बनने के लिए पैदा हुआ है और जब मुझे उसकी चीख सुनाई दी तो मुझे

उसमें न्याय का एक अंतर्भूत भाव प्रतीत होता है जो इस क्रिया से आहत हुआ है।

जिस बात पर रूसो ध्यान दिलाना चाहते हैं वह यह है कि एक व्यक्ति की इच्छा का दूसरे व्यक्ति पर बिना सहमति के आरोपण एक सबसे नुकसानदेह बात है जो किसी दूसरे व्यक्ति के साथ की जा सकती है और इस नुकसान की शुरुआत इस शैशव आयु में हो चुकी है। इसके प्रतिकूल जो खतरा है, वह यह कि आप बच्चे को अपने आस-पास के दूसरे लोगों पर प्रभुत्व स्थापित करने की छूट दे रहे हैं। यहां रूसो की एक और उक्ति पर ध्यान दें जिसमें वे बच्चे के रोने के बारे में बताते हैं कि जब बच्चा पहले रोता है तो वह प्रार्थना कर रहा होता है लेकिन अगर ध्यान न रखें तो उसका रोना आपके लिए निर्देश भी बन सकता है। यह हमारा ध्यान एक विपरीत खतरे की ओर भी इंगित करता है कि ऐसा न हो कि बच्चा अपने पालने वालों के लिए आदेशदाता ही न बन जाए।

तब बच्चे को पढ़ाया कैसे जा सकता है जब तक शिक्षक बच्चे पर अपनी इच्छा का आरोपण न करे ? मेरे ख्याल से यह मुद्दा हमें बाल केन्द्रित शिक्षा पद्धति के उन खास बिन्दुओं की ओर ले जाता है जो अपने मूलभाव में मध्यस्थतावादी हैं। रूसो तर्क देते हैं कि जब एक व्यक्ति अपनी इच्छा दूसरे पर नहीं लाद सकता, तो ऐसी स्थिति में बच्चे को सिखाने का काम प्रकृति करे। इस तरह से बहुत-सी शैक्षिक परियोजनाएं इस बात को समझाने का काम करती हैं कि यह (प्रकृति द्वारा शिक्षा का) काम किस तरह से संभव है। रूसो जो तकनीक अपनाते हैं उसमें दो चीजें हैं। एक यह कि वे अंतर्भूत प्रेरणा के विचार का प्रयोग करते हैं जिसका उल्लेख मैं कर चुका हूं। दूसरे, वे ऐसी प्राकृतिक स्थितियां उत्पन्न करने का प्रयास करते हैं जिसमें बच्चा अपनी खुद की प्रेरणा से सीख सके। वे अपने इस अभिमत का प्रयोग गणित, भूगोल आदि सीखने के अधिक आकदमिक पहलू के लिए करते हैं। यह एक प्रकार से नैतिक मूल्यों की शिक्षा भी है। अगर मुझे किसी बच्चे को नैतिक मूल्यों की शिक्षा देनी है तो वह किन्हीं आदेशों, सजाओं या इसी प्रकार के किसी अन्य प्रकार के माध्यम से संभव नहीं है। यह मुझे प्रकृति के माध्यम से ही करना होगा। और इसलिए बच्चे से कभी यह नहीं कहना चाहिए कि, ''मैं नहीं चाहता कि तुम ऐसा करो'' बल्कि यह कहा जाए कि ''अब नहीं है।'' और जब भी बच्चा कोई गैर वाजिब मांग करे तो जवाब होना चाहिए कि अब नहीं है या अब और नहीं है। बजाय इसके कि उसे उस मांग न करने के लिए कहा जाए या उसे डांटा जाए। इस बात को समझने के लिए एक शरारती बच्चे का उदाहरण लिया जा सकता है जो हमेशा अपने कमरे की खिड़की का शीशा तोड़ देता है। आप बच्चे को खिड़की का शीशा तोड़ने के लिए सजा न दें बल्कि खिड़की को वैसा ही छोड़ दें और जब सर्दी खिड़की के रास्ते अंदर आएगी तो बच्चे को खुद महसूस होगा कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए था।

अब मैं इस बारे में कुछ अन्य बात करते हुए इंगित करूंगा कि कैसे उनका विचार आगे बढ़कर बच्चे की संपूर्णता में शिक्षा तक पहुंचता है। *एमिल* में अनेकानेक ऐसे उदाहरण हैं जिसमें बताया गया है कि बच्चा कैसे अपने जीवनानुभवों से दूसरों का सम्मान करना और अकादमिक शिक्षाक्रम की कई चीजें सीखता है। इस क्रम में मुझे रूसो के उस उदाहरण का जिक्र करना चाहिए जो उनकी पद्धति का संभवतः सबसे ज्यादा चर्चित उदाहरण है। *एमिल* जो शिक्षा ग्रहण कर रहा है वह अभिजात वर्ग की शिक्षा है। बालक के साथ एक शिक्षक है जो उसकी युवावस्था तक उसके साथ रहता है। और इसलिए हम यहां बच्चों के वर्ग की बात नहीं करेंगे। एमिल के संदर्भ में यह एक वयस्क और बच्चे का संबंध है। इस बिन्दु पर पूछा जा सकता है कि रूसो के विचार की उस संदर्भ में अर्थवत्ता कितनी है जिसमें हममें से अधिकांश लोग काम करते हैं। और यह भी पूछा जा सकता है कि इनमें से कितने विचारों को आम शिक्षा प्रणाली में लागू किया जा सकता है। तथापि रूसो के मन में भूगोल सिखाने का जो तरीका था उसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। ये बच्चे को कुछ खास अनुभवों के माध्यम से भौगोलिक अवधारणाएं सिखाने का प्रयास है। और इसका सबसे चर्चित उदाहरण यह है जब रूसो यानी शिक्षक एमिल जो इस समय लगभग 9 या 10 साल का होगा, को हवेलीनुमा घर के पार्क में टहलाने के लिए ले जाता है और इस बात की व्यवस्था करता है कि एमिल के पास बहुत ज्यादा खाने पीने का सामान न हो और वह एमिल को पार्क में रास्ता भुला देने में सफल होता है। इस स्थिति में एमिल भूखा प्यासा और थोड़ा डर जाता है। और इस तरह से आप देख सकते हैं कि प्रकृति के नियम उस पर काम कर रहे हैं। इस स्थिति में शिक्षक एमिल को महज कुछ संकेत देता है ताकि वह इस स्थिति से खुद को बाहर निकाल सके। वह एमिल को उन बातों पर ध्यान देने के लिए कहता है जो वह जानता है। जैसे इस समय आकाश में सूर्य कहां पर है ? यह ठीक ऊपर है इसलिए इस समय दोपहर है। उसके बाद शिक्षक पूछता है कि पश्चिम किधर है? इस समय दोपहर में सूर्य यहां है, और तुमने पश्चिम दिशा का अंदाजा लगा लिया। इस प्रकार शिक्षक कुछ अन्य सवाल पूछ कर एमिल की मदद करता है और एमिल अपने घर की

दिशा खोजने में सफल होता है और अंततः शिक्षक उसको सुरक्षित बाहर निकाल लाता है। यह रूसो की शिक्षण पद्धति का ठेठ उदाहरण है। इस बारे में कुछ बातें मैं यहां पर करना चाहूंगा। पहली बात यह कि यह तरीका निर्मम प्रतीत होता है। दूसरे, यहां बच्चे पर केवल प्रकृति काम नहीं कर रही क्योंकि शिक्षक खुद ऐसी परिस्थितियां पैदा कर रहा है और उसमें एमिल को सीखने के लिए बाध्य किया जा रहा है। इस तरह से एक अपरोक्ष शिक्षा पद्धति काम कर रही है जिसमें शिक्षक परिस्थितियां पैदा कर रहा है और बच्चा वह सीखने में सक्षम हो रहा है जो शिक्षक उसे सिखाना चाहता हैं।

मुझे लगता है कि मैंने रूसो के शिक्षा संबंधी दृष्टिकोण का एक खाका प्रस्तुत कर दिया है और अब मैं उसके प्रभाव की बात करूंगा। लेकिन उससे पहले मैं कुछ बातें रूसो की पूर्व धारणाओं के बारे मे करना चाहूंगा जो संभवतः आगे चलकर बाल केन्द्रित शिक्षा के पतन का कारक बनीं। पहला कारण रूसो के मन में अक्षर ज्ञान और पढ़ाने की समझ को लेकर दुविधा थी। जैसा मैंने पहले बताया कि वे मानते थे कि बच्चों को पढ़ने-लिखने से कम से कम 12 वर्ष की आयु में परिचित कराना चाहिए। वे सत्ता के रूप में किताबों की मौजूदगी को भी संदेह की नजर से देखते थे। वे डॉक्टरों पर भी विश्वास नहीं करते थे, लेकिन यह अलग मुद्दा है और अभी हम इस पर बात नहीं करेंगे। लेकिन किताबों को लेकर उनके मन में बहुत संदेह था। *एमिल* में इस तरह के कई असंयमित विचार हैं, उन्हीं में से एक जगह पर वे कहते हैं कि, ''मुझे किताबों से घृणा है।'' मुझे लगता है कि यह एक चौंकाऊ टिप्पणी है। अगर आप चाहें तो किताबों से सीखने के प्रति संदेह को रूसो का दाय मान सकते हैं। रूसो की दूसरी मान्यता वह है जिसमें वे सीखने की अंतर्भूत प्रेरणा को अपने चरम में होना मानते हैं। रूसो इस बात से बिल्कुल सहमत नहीं हैं कि सीखने के लिए कोई बाह्य या उत्पन्न की गई प्रेरणा की जरूरत होती है। इसलिए उनके अनुसार सीखना केवल बच्चे की अपनी प्रेरणा से होना चाहिए।

रूसो के विचारों का असर क्या हुआ ? यूरोप में उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति जर्मन शिक्षक हेनेरिक पेस्तालॉजी हुए हैं जिन्होंने 'हाउ ग्रेट्यूड टीचेज़ हर चिल्ड्रन' नामक किताब लिखी है। वे हालांकि खुद को रूसो का प्रशंसक मानते हैं और उनके विचारों का प्रचार भी इस तरह से करते हैं जिससे उन्हें आम जन शिक्षा के लिए उपयुक्त बनाया जा सके। इसलिए इनके काम में बच्चों की रुचि और उनकी अपनी प्रेरणा का ध्यान आम जन शिक्षा के संदर्भ में रखा गया है। पेस्तालॉजी के बारे में एक रोचक बात यह है कि वे रूसो के विचारों में से वही चुनते है जो उन्हें चाहिए, बाकी को छोड़ देते हैं। इसलिए पेस्तालॉजी के लिए यह कोई मुद्दा नहीं है कि छोटे बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाया जाए या नहीं बल्कि वे तो कुछ निर्देशात्मक तकनीकों को अपनाने की हिमायत करते हैं। पेस्तालॉजी के विचार पूरे यूरोप में प्रसिद्ध हो गए थे। उनके विचारों को 1830 जर्मनी के पासर्या राज्य की शिक्षा व्यवस्था में लागू भी कर दिया गया था। इसके अलावा भी ये विचार कई अन्य क्षेत्रों जैसे जर्मनी में व्यावसायिक शिक्षा में महत्त्वपूर्ण होने लगे थे। मुझे लगता है कि इन शिक्षकों ने जिन्होंने रूसो के विचारों और पेस्तालॉजी के गतिविधि द्वारा सीखने को अपनाया, उन्होंने इसे तर्क बनाया कि सभी बच्चों (चाहें वे अकादमिक मानस वाले हों या गैर-आकदमिक मानस वाले) को प्रायोगिक गतिविधियों को करते हुए सीखना चाहिए। उन्होंने इसे एक आधार के रूप में इस्तेमाल किया जिससे शिक्षा का ऐसा अकादमिक रूप विकसित किया जा सके जो छात्रों को समाज के वृहत्तर रूप से परिचित करा सके।

एक ऐसा देश भी है जहां रूसो के विचार जर्मनी से भी ज्यादा प्रभावी रहे। यहां इन विचारों को पेस्तालॉजी की परंपरा के माध्यम से अपनाया गया। यह जगह इंग्लैण्ड है। यह बात खास तौर पर बीसवीं सदी के आरम्भ से मध्य तक के लिए तो सच ही है। *एमिल* का अंग्रेजी अनुवाद 1905 में हुआ और बहुत जल्द ही उच्च वर्ग में और प्रभु वर्ग के कुछ लोगों के लिए एक प्रभावी किताब बन गई। 1910 में प्रारंभिक शिक्षा के मुख्य निरीक्षक एडमंड होम्स ने एक पुस्तक लिखी 'व्हाट इज़ एण्ड व्हाट माइट बी'। और आप चाहें तो इसे रूसो की परंपरा की प्रगतिशील शिक्षा का मेनिफेस्टो कह सकते हैं। और लगभग इसके आसपास ही ए. एस. नील जैसे शिक्षाविद् भी थे जो समरहिल जैसे स्कूल स्थापित कर रहे थे जिसमें एक बार फिर उसी 'सत्ता के प्रति संदेह' की परंपरा को पोसा जा रहा था और जहां माना जा रहा था कि बच्चे को खुद अपनी प्रेरणा से सीखना चाहिए। कुछ लोगों का मानना है कि पहले विश्व युद्ध का शैक्षिक चिंतन पर काफी प्रभाव पड़ा क्योंकि उस दौर के खून-खराबे और हिंसा से परे हटने की लोगों की इच्छा ने रूसो के विचारों को समाज में फैलने में मदद की।

इसलिए पहले विश्व युद्ध के बाद अनेक सरकारी रिपोर्टों में सुझाव दिया गया कि रूसो के सीखने के बारे में विचारों को, खास तौर पर उस विचार को अपनाया जाना चाहिए जिसमें बच्चों को बिना निर्देश दिए अपनी प्रेरणा से सीखने की बात कही गई है। यह बात सन 20 और 30 के दशकों की सरकारी रिपोर्टों के केन्द्रीय

भाव के रूप में विद्यमान रही। और शायद ही तत्कालीन स्कूलों में चल रही परिपाटी पर इस बात का कोई असर हुआ हो। लेकिन दूसरे विश्वयुद्ध के बाद महारानी के निदेशालय के माध्यम से प्रगतिशील और रूसो के विचारों को और अधिक उत्साह से प्रचारित किया जाने लगा और शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेजों में ये बेहद प्रभावी हो गए। इसका पटाक्षेप 1967 में प्लाउडेन रिपोर्ट के साथ हुआ, जिसमें प्रगतिशील शि ाक्षा को सभी प्रारंभिक स्कूलों में लागू करने की संस्तुति की गई। तो आप कह सकते हैं कि यह प्रगतिशील बाल केन्द्रित शिक्षा का वह उफान था जो *एमिल* से उत्पन्न हुआ और इसके बाद इसका तेजी से पतन हुआ। मैं उसके बारे में भी कुछ बातें करूंगा।

तो हम देख सकते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में निदेशालय और सरकारी तंत्र जैसी कई शक्तिशाली ताकतें बाल केन्द्रित शिक्षा के लिए काम कर रही थीं। अभी प्लाउडेन रिपोर्ट को प्रकाशित हुए 10 साल भी नहीं बीते थे कि लोगों को एक चिंता यह सताने लगी कि इस बाल केन्द्रित शिक्षा का ब्रिटेन के वासियों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। यह भी चिन्ता का एक मुद्दा बना कि इस बाल केन्द्रित शिक्षा के निहितार्थ क्या हैं। कारण यह कि इसे बिना किसी प्रचार के लागू किया गया था और इसलिए शिक्षा की परंपरागत पद्धति के लिए एक सरदर्द बन गया। इसे लेकर आमजन में एक मुहावरा भी बन गया कि शिक्षाक्रम एक गुप्त बागीचा है जिसमें केवल शिक्षकों को ही प्रवेश मिल सकता है और अभिभावक केवल चाहरदीवारी के बाहर से ही अंदर की झलक ले सकते हैं। इसमें एक समस्या तो यह थी, जैसा मैंने पहले कहा, अक्षर ज्ञान और संख्या ज्ञान को लेकर लोगों के मन में चिंताएं थीं। कुछ ऐसे विवाद भी थे जो राजनीतिक और आमजन के अभिमत को बेमेल असंगत तरीके से प्रभावित कर रहे थे। मिसाल के तौर पर 1974 में लंदन के एक प्राथमिक स्कूल में हड़ताल हुई। कारण यह था कि कुछ शिक्षक स्कूल को ठेठ बाल केन्द्रित बनाना चाहते थे। इस पर शिक्षकों की आपस में झड़प हुई और इस पूरे माहौल में स्कूल चौपट हो गया। परिणामस्वरूप एक वरिष्ठ वकील की रिपोर्ट और उसके बाद प्रधानमंत्री जेम्स कैलेहन के भाषण में इंग्लैण्ड की शिक्षा व्यवस्था की क्षमताओं के प्रति चिंता व्यक्त हुई कि बच्चों को समुचित तरीके से जीवन और दुनिया के लिए कैसे तैयार किया जाए। और इसके फलस्वरूप 1988 में शिक्षक प्रशासन के सुधारों की शुरुआत हुई। इसमें अन्य बातों के साथ बाल केन्द्रित शिक्षा से हट कर शिक्षण के पारंपरिक तरीकों की ओर लौटने की बात भी थी।

मैं अपनी बात को वर्तमान तक लाकर समाप्त करूंगा। राजनीतिक माहौल में बहुत हद तक बाल केन्द्रित शिक्षा के खिलाफ आम राय बनने लगी। लेकिन मुझे नहीं लगता कि हम यह मान लें कि वह विचार रातों-रात बदल जाएगा जिसकी जड़ें इंग्लैण्ड की शिक्षा व्यवस्था में गहरी जमी हुई हैं। राजनेताओं का ऐसा कहना एक बात है और असलियत में ऐसा बदलाव होना दूसरी बात है। मुझे लगता है कि रूसो और शिक्षकों के परंपरागत विचारों के बीच की एक विभाजन रेखा को देखना जरूरी है और इसे अक्षर ज्ञान के लिए निर्देशों के संदर्भ में देखें। 1980 के दशक में एक अन्य चर्चित शैक्षिक आंदोलन चला जिसमें खासतौर पर संरचनावादी (कंस्ट्रक्टिविस्ट) विचारों को जगह मिली और पढ़ना और लिखना सिखाने के निर्देशात्मक तरीकों से प्रायोगिक तरीकों को तरजीह मिली। इन प्रयोगिक तरीकों को इमरजेंट लेखन कहा गया। दोनों आंदोलनों ने लोगों का, खास तौर पर शिक्षकों का ध्यान अपनी ओर खींचा और काफी चर्चित रहे।

अक्षर ज्ञान की शिक्षा का मुद्दा खास तौर पर उन लोगों के बीच एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा बन कर उभरा जो शिक्षण के संरचनावादी तरीकों के हामी थे और ये उनके लिए भी महत्त्वपूर्ण बना जो मानते थे कि शिक्षण के लिए अधिक व्यवस्थित निर्देश जरूरी हैं। हाल में वहां की सरकार की बहसों में सेंथेटिक फोनिक्स के माध्यम से पढ़ना सिखाने की जरूरत पर बल दिया जा रहा है। इसमें जल्दी-जल्दी ध्वनियों को मिलाकर सुनने और इस तरीके से पढ़ने का प्रयास किया जाता है। इसलिए सरकार की ओर से इस सेंथेटिक फोनिक्स के तरीके को पूरे प्राथमिक शिक्षा जगत में फिर से लागू करने के लिए जबरदस्त प्रचार चल रहा है। और मुझे लगता है कि बाल केन्द्रित शिक्षा के पैरोकार इसका विरोध कर रहे हैं।

अब जाकर वे रूढ़िवादी लोगों की भांति निर्देशों को बेहतर रूप में दिए जाने के लिए नयी प्रवृत्तियों के खिलाफ संघर्ष की स्थिति में प्रतीत होते हैं। बाल केन्द्रित शिक्षा के *एमिल* पर आधारित रूप का प्रभाव बेशक कम हुआ है। लेकिन इंग्लैण्ड में इसके पैरोकार अभी भी काफी प्रभावी हैं। और इसमें भी कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी अगर कभी भविष्य में रूसो के विचारों को पुनः इंग्लैण्ड में जगह मिले। और यह एक तथ्य है कि रूसो के विचारों के पेस्तालॉजी वाला संस्करण जिसमें निर्देशों के लिए स्थान था, ब्रिटिश शिक्षा में गहरे पैठा है। ◆